Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 SHISRRJ | Volume 3 | Issue 1 | ISSN : 2581- 6306

महर्षि शुक्र द्वारा सभा संगठन, शक्तियाँ एवं उनके कार्यों का विवरण

डॉ0 अवनीश कुमार
इतिहास विभाग बाबा साहेब
भीमराव अम्बेदकर बिहार
विश्वविद्यालय, मुज्फ्फपुर,
बिहार, भारत

सारांश –शुक्रनीति की राज्यव्यवस्था में विधायी, प्रशासनिक एवं न्यायिक शक्तियों के सम्बन्ध में राजा की शक्ति अन्तिम नहीं अपितु ऐसा प्रतीत होता है कि सम्पूर्ण शासन कार्यो के सम्बन्ध में शक्ति का आधार सभा में ही निहित है।

मुख्यशब्द – महर्षि शुक्र, सभा, संगठन, शक्तियाँ, कार्य, शुक्रनीति।

सभा संगठन, शक्तियां एवं कार्य : शुक्रनीति में मंत्रिपरिषद के अतिरिक्त दूसरी महत्वपूर्ण राजनीतिक संस्था सभा है। वैदिक साहित्य के वर्णन से संभवतः ऐसा प्रतीत होता है कि वैदिक युग ने शुक्रनीति तक सभा का अस्तित्व निरंतर घटता ही गया। इस प्रकार शुक्रनीति में सभा को उतना महत्वपूर्ण स्थान नहीं रखा जितना कि वैदिक युग में। फिर भी वैदिक साहित्य,रामायण, महाभारत आदि की भांति जिस प्रकार शुक्रनीतिकार ने सभा शब्द का प्रयोग राजकार्य एवं न्यायिक कृत्य करने वाली संस्था के रूप में तथा मंत्रणा भवन वादविवाद सभा आदि अनेकार्यो में किया है। इससे ऐसा आभास मिलता है कि शुक्रनीति के सभा सम्बन्धी विचारों पर वैदिक प्रभाव अवश्य रहा। इतना अवश्य है कि शुक्रनीति में सभा शासन के एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में स्वीकार की गयी है जिसके माध्यम प्रजाजनों के राजकार्य में भाग लेने की व्यवस्था बताई गई है। सभा के सदस्यों को सभासद एवं सभ्य कहकर पुकारा है।

सभा के संगठन का क्रमबद्ध एवं सांगोपांग वर्णन उपलब्ध नहीं होता किन्तु फिर भी प्राप्त संकेतों से इतना अनुमान लगाया जा सकता है कि शुक्रनीतिसार सरकारी एवं गैर सरकारी, दो प्रकार के सदस्य रखने के पक्ष में रहे हैं। प्रथम श्रेणी के सदस्यों में मंत्रिपरिषद के सदस्य, सेनापति, राजा के सम्बन्धी जन व अन्य राज्य के अधिकारियों को रखा जा सकता है। सरकारी सदस्य संभवतः सभा के पदेन सदस्य होंगे तथा दूसरी श्रेणी में लोक-व्यवहार जानने वाले, विद्वान, सदाचार, सौजन्य एवं दया आदि सदगुणों से युक्त, शत्रु तथा मित्र में समभाव रखने वाले सत्यवादी आलस्य रहित, काम, क्रोध, लोभ के जीतने वाले आदि निर्धारित योग्यताओं वाले सभी जातियों के साधारण वृद्ध नागरिकों को रखा जा सकला इसके अतिरिक्त न्यायिक कृत्य सम्पादित करने वाले सदस्यों में मुकदमा देखने की रीति जानने, बुद्धिमान, चरित्र एवं शीलवान शत्रु तथा मित्र में समभाव रखते मृदभाषी, कान, क्रोध, लोभ को जीतने की शक्ति, सत्यवादिता आदि विशिष्ट, योग्यताओं का भी होना अनिवार्य माना है, जिन्हें राजा द्वारा नामजद किया जायेगा। कुछेक संकेतों से ऐसा प्रतीत होता है कि शुक्रनीति की सभा में केवल सभासदों के बैठने की ही व्यवस्था नहीं है अपितु सभा के सदस्यों के अतिरिक्त कुछ लोग सभा में दर्शक के रूप में भी बैठ सकेंगे साथ ही इन लोगों को यह अधिकार भी दिया गया है कि यदि ये परिस्थिति के अनुरूप क्या में बोलना उचित समझते हों तो इन्हें विचार व्यक्त करने की स्वतंत्रता प्रदान की गयी है । शुक्रनीति में केवल प्रभासदों के प्रकार ही नहीं बताये गए अपितु उनके सभा में बैठने आदि के स्थानों एवं विभागों का भी समुचित विवेचन किया गया है जिसके अंतर्गत राज्य सभा में पश्चिम और मध्य में स्वयं राजा का सिंहासन रहेगा। लेकिन पास में बैठने वाले अन्य लोग दाहिना और बामा भाग में ही बैठेंगे। पुत्र, पौत्र, भाई, भान्जे और भागिन आदि सभी के राजसिंहासन के पृष्ठ भाग में दक्षिण और बाँदी और उक्त क्रम में बैठने की व्यवस्था करेगी चाचा, अपने कुल के श्रेष्ठ, सेनापति की दक्षिण एवं नाना के कुल के श्रेष्ठ पुरूष मंत्रिगण, बांधव श्वसुर साले आदि की वाम भाग में पृथक-पृथक बैठने की व्यवस्था होगी दामाद तथा बहनोई वामदक्षिण एवं अपने समान हैसियत वाले अथवा मित्र सिंहासन के समीप या अर्ध-भाग के ऊपर बैठेंगे। दत्तक पुत्रादि होने की स्थिति में शुक्रनीतिकार ने व्यवस्था की है कि वे दौहिज तथा भानजों के स्थान पर एवं भांजे तथा दौहित्र पुत्रादि के स्थान पर बैठे। चूंकि पिता की भांति आचार्य पूज्य होते हैं अतः उन्हें राजसिंहासन के समान श्रेष्ठ आसन देना चाहिए। इसके अतिरिक्त सिंहासन

के अग्रभाग के दोनों ओर मंत्रियों, उनके पीछे क्रमशः सभी वर्ग के लेखकों, राज्य कर्मचारियों एवं अन्य सभी सदस्यों के बैठने की व्यवस्था की गयी है। उक्त सभी सभासदों के बैठने के उपरान्त महर्षि शुक्र ने आगन्तुकों को सम्मान प्रदान करने तथा उनके आगमन की सूचना राजा को देने के उद्देश्य से दो स्वर्ण दण्डधारी राज दरबारियों की भी नियुक्ति की है। इसके साथ ही महर्षि शुक्र ने राज्य सभा में सदस्यों के बैठने की दूरी का भी निर्धारण किया है। उनका विचार है कि राजा को सदैव सावधान होकर सुन्दर भूषण, वस्त्र, कवच, तथा मुकुट धारण करके तथा अग्न अस्त्रों को, चलाने के लिए प्रस्तुत किए हुए अस्त्रों को धारण करते हुए विशिष्ट राज्य चिन्हों से विभूषित होकर सुखपूर्वक राज्य सिंहासन पर बैठना चाहिए। राज्य सभा में पुरोहित आदि पूज्य एवं अन्य राज्य अधिकारी गणों के प्रवेश के समय राजा को क्रमशः सम्मानपूर्वक सिंहासन से उठकर एवं स्नेहपूर्वक उनको बैठाना चाहिए। इस प्रकार शुक्रनीति में प्रत्येक सदस्य के लिए उसकी स्थिति और प्रतिष्ठा के अनुरूप बैठने की व्यवस्था की गई है। उक्त वर्णन से ऐसा भी आभासित होता है कि शुक्रनीति की राजव्यवस्था में राजा सभी सदस्यों से पूर्व सभापति का आसन ग्रहण करेगा।

सभा-भवन की इमारत के निर्माण का बहुत ही सुन्दर एवं प्रभावशाली ढंग के वर्णन किया है । राज्य सभा दक्षिण से ऊपर की ओर लम्बी अथवा पूर्व से पश्चिम की तरफ दुगुनी तिगुनी लम्बी बनाई जानी चाहिए । सभा भवन की सुरक्षा का भी पर्याप्त प्रबन्ध किया गया है । ऊपर के गृह में शामियाना एवं सभी गृहों में खिड़कियों की व्यवस्था की गई है। आचार्य शुक्र का मत है कि बगल के कमरे की अपेक्षा मध्य के कमरे का विस्तार दोगुना एवं उसकी ऊंचाई कमरे की ऊंचाई पंचमांश अधिक से या समान विस्तार की होनी चाहिए। कमरों के ऊपर छत एवं दुमंजिला इमारत की स्थिति में मध्य का कमरा एक मंजिला तथा चारों ओर दरवाजों की व्यवस्था होनी चाहिए। हवा पहुँचाने की व्यवस्था के साथ ही साथ उनमें समय सूचक यंत्रों, सुन्दर शीशों तथा चिकों का प्राविधान होना चाहिए। इसके अतिरिक्त राज्यसभा से 100 हाथ की दूरी पर मंत्री, लेखक, सभा-सदस्यों तथा अधिकारी पुरूषों के कार्य करने के लिए कमरों का निर्माण किया जाए। राजभवन के उत्तर अथवा पूर्व भाग में सेना के रहने की व्यवस्था के साथ-साथ प्रजा के भवनों को राजभवनों से दूर रखने की व्यवस्था की जाये।

इस प्रकार स्पष्ट है कि राज्य-सभा प्रजा के रहने के स्थान से दूर बनाये जाने की व्यवस्था की गयी है।

सभा के अधिकार एवं कर्तव्यों का कोई स्पष्ट विवेचन शुक्रनीति में उपलब्ध नहीं होता किन्तु फिर भी यत्र-तत्र प्राप्त संकेतों से स्पष्ट है कि महत्वपूर्ण शासन सम्बन्धी कार्य राज्यसभा की सहमति एवं परामर्श से ही किये जाएगें। महर्षि शुक्र ने राजा का यह दायित्व निश्चित किया है कि वह राज्यकार्य के संबंध मे राज्यसभा में बैठकर समुचित विचार-विनिमय के उपरान्त ही निर्णय करें। इस प्रकार विधायी एवं प्रशासनिक निर्णयों में सभा का महत्वपूर्ण हाथ रहेगा।

सभा प्रशासकीय एवं विधायी निर्णयों साथ-साथ न्यायिक कार्य भी करेगी लेकिन न्यायिक कार्य करने के समय राज्यसभा के संपूर्ण सदस्य सभा में उपस्थित नहीं होंगे अपितु इंग्लैण्ड की लार्ड सभा की भाति उनके स्थान पर केवल मात्र न्यायिक सदस्य ही राजा, अधिकारी-सभ्य, स्मृति, गणक, लेखक आदि कर्मचारीगण ही उपस्थित रहेंगे। इसके अतिरिक्त महर्षि शुक्र ने सुवर्ण, अग्नि, जल, धन आदि का भी सभा में होना अनिवार्य मानकर उपयुक्त दस साधनों से युक्त सभा को यज्ञ सभा के रूप में स्वीकार किया है। इस यज्ञ-सभा में राजा कुशल ब्राह्मणों एवं मंत्रियों के साथ न्यायिक कार्य करने के उद्देश्य से न्यायासन पर बैठेगा तथा उक्त दस साधनों के साथ वादी-प्रतिवादी, दोनों में समान भाव रखकर प्रश्न पूछते हुए विवेकपूर्वक निर्णय करेगा लेकिन राजा का उक्त निर्णय उसका व्यक्तिगत न होकर अन्य सभी सभा में उपस्थित न्यायधिकारियों के बहुमत का निर्णय होगा। राजा के अधर्म में प्रवृत्त हो जाने की स्थिति में अन्य न्यायाधिकारियों का यह दायित्व निश्चित किया गया है कि वे उसकी उपेक्षा न करते हुए उस पर नियन्त्रण रखकर उचित न्यायिक निर्णय करें। इस प्रकार उचित न्यायिक निर्णय करने वाले राजा एवं न्यायाधिकारी, दोनों ही महर्षि शुक्र की मान्यता के अनुसार नरकगामी होंगी। इस भांति स्पष्ट है कि न्यायिक निर्णयों में भी राजा की शक्ति व्यक्तित्व एवं निरंकुश न होकर वर्तमान समय की बहुसम्मत प्रणाली की भांति ही है।

उपर्युक्त सम्पूर्ण विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि शुक्रनीति की राज्यव्यवस्था में विधायी, प्रशासनिक एवं न्यायिक शक्तियों के सम्बन्ध में राजा की शक्ति अन्तिम नहीं अपितु ऐसा प्रतीत होता है कि सम्पूर्ण शासन कार्यो के सम्बन्ध में शक्ति का आधार सभा में ही निहित है।

संदर्भ ग्रंथ-

प्रमाकर दीक्षित - पृष्ठ-174
वै0 पी0 जयसवाल, ओप0 सीट पृष्ठ -19
अर्थवेद मे सभा को प्रजापति का कन्धा माना है।
के0 पी0 जयसवाल पेज 13-17
पंडित वैश्व- धर्मशास्त्र को जानने वाले। शु0- 5,26
महाभारत, सभापर्व 5, 27
रामयणः- बालकांड- 7,4-5 एवं 1,3